सच्ची सफलता क्या है?

श्री स्वामी चिदानन्द

अनुवादिका

श्री स्वामी शिवाश्रितानन्द माता जी

प्रकाशक

द डिवाइन लाइफ सोसायटी

पत्रालय : शिवानन्दनगरह्लह्ल२४९१९२

जिला : टिहरी–गढ़वाल, उत्तराखण्ड (हिमालय), भारत

www.sivanandaonline.org, www.dlshq.org

प्रथम संस्करण : २०१४

(२,००० प्रतियाँ)

द डिवाइन लाइफ ट्रस्ट सोसायटी

Swami Chidananda Birth Centenary Series—11

निःशुल्क वितरणार्थ

'द डिवाइन लाइफ सोसायटी, शिवानन्दनगर' के लिए
स्वामी पद्मनाभानन्द द्वारा प्रकाशित तथा उन्हीं के द्वारा 'योग-वेदान्त
फारेस्ट एकाडेमी प्रेस, पो. शिवानन्दनगरह्वह्व२४९१९२,
जिला टिहरी-गढ़वाल, उत्तराखण्ड' में मुद्रित।
For online orders and Catalogue visit : dlsbooks.org

ब्रह्मलीन परम पावन
श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज द्वारा
प्रातः ब्राह्ममुहूर्त के ध्यान के उपरान्त दिये गये
प्रवचनों का सार-संग्रह

विषय सूची

१. सच्ची सफलता क्या है? ५

२. आकांक्षा करें और उसके योग्य बनें ७

३. उत्साह बनाये रखना होगा ११

४. समस्याओं को देखने का एक दूसरा ढंग १५

५. केवल भगवान् का ही चिन्तन १८

६. सदा आशावादी रहें! २०

७. आध्यात्मिक उन्नति २३

८. दिव्य जीवन यापन २६

९. मानव-जीवन का उद्देश्य ३१

१

सच्ची सफलता क्या है?

हमारी सही पहचान की उद्घोषणा, उस परम तत्त्व के साथ एकत्व की, **'तत् त्वं असि'** की खोज और उसकी उद्घोषणा, मानव मात्र द्वारा इस धरती पर अभिव्यक्त की जाने वाली महानतम उद्घोषणा है। इससे तत्काल यह प्रकट हो जाता है कि मानव-चेतना कितने ऊँचे तक पहुँची हुई है तथा साथ ही यह भी स्पष्ट हो जाता है कि हममें से प्रत्येक के भीतर इस महान् ऊँचाई तक पहुँच सकने की क्षमता है। यह एक ओर तो हमें अत्यन्त सन्तोष प्रदान करता है, दूसरी ओर झकझोर भी देता है कि यह हमें सफलता-प्राप्ति के लिए वास्तव में अपनी सामर्थ्य को लगाने का आह्वान है।

सफलता है क्या? सच्ची सफलता क्या है? क्या लक्ष्य प्राप्त करने को सफलता समझना चाहिए? एक कहावत है कि यात्रा का सच्चा रोमांचकारी हर्ष और प्रसन्नता तो जितना स्वयं यात्रा में है, गन्तव्य पर पहुँच जाने में उतना नहीं है। एक बार जब आप मंजिल पर पहुँच जाते हैं, तो वह प्रतिदिन की पुलक और प्रसन्नता, वह उत्साह की भावना, वह दृष्टि के समक्ष प्रतिदिन के नये दृश्य, सब समाप्त हो जाते हैं। अब वह प्रतिदिन का मन को पुलकित कर देने वाला आनन्द, वह प्रसन्नता, वह उत्साह व जोखिम उठाने की भावना और नहीं रहती।

इस प्रकार वस्तु-परिस्थितियों को इस दृष्टि से देखें, तो प्रत्येक कार्य को कर देने की प्रतिज्ञा कर लेने में ही एक पुलक और प्रसन्नता भर

देने की सम्भावना बन जाती है। इतना उसकी परिसमाप्ति पर नहीं, प्रत्युत् उत्तरदायित्व ले कर प्रारम्भ देने पर ही! कार्य-सम्पादन हो जाने का अपना सन्तोष होगा; किन्तु प्रतिदिन, निरन्तर प्रसन्नता की जो अनुभूति प्रयास करने में, बीड़ा उठा लेने में है, कार्य सम्पादित करने की वचनबद्धता में है, उसके साथ इसकी तुलना नहीं कर सकते।

इस दृष्टिकोण से देखें, प्रत्युत् इस स्फूर्तिवर्धक ढंग से देखें, तो सफलता का अर्थ हैह्वह्वस्वयं को और अपने जीवन को उस महान् लक्ष्य की प्राप्ति के लिए पूरी तरह से समर्पित कर देने की योग्यता उत्पन्न करना। यह क्षमता लाना ही अपने-आपमें एक सफलता है। यदि आप इस महान् यात्रा में प्रवेश पा लेते हैं, इस परिपूर्णता और मोक्ष के पथ पर अग्रसर हो लेते हैंह्वह्वऔर इस पर चलते-भर रहते हैंह्वह्वअपनी पूर्ण शक्ति और सामर्थ्य सहितह्वह्वऔर स्वयं अपने-आपको और अपने सम्पूर्ण जीवन को इसके प्रति समर्पित कर देते हैं, तो समझें कि आपने शानदार विजय प्राप्त कर ली है। इसमें कोई भी सन्देह नहीं है। समस्त दैवी प्रशंसा आपके लिए है। देवता आनन्दित होंगे, भगवान् निःसन्देह आपकी ओर अत्यन्त स्नेहिल और प्रसन्नतापूर्वक सन्तोषपूर्ण दृष्टि से निहारेंगे कि 'यह मेरा योग्य बालक है, इसे जो जीवन रूपी उपहार दिया गया था, उसका इसने यथोचित उपयोग किया है। यह मेरा अपना कहलाने के योग्य है।'

ऐसा जीवन होना चाहिए आपका। और परमात्मा हमें इस पथ पर चलने का आशीर्वाद दें! श्रद्धेय गुरुदेव के चयनित आशीर्वाद हमें अपना जीवन ऐसा ही बनाने के योग्य बनायें!

२

आकांक्षा करें और उसके योग्य बनें

एक महत्त्वपूर्ण कहावत है कि 'व्यक्ति जिस योग्य होता है, वही पाता है।' यह केवल आध्यात्मिक क्षेत्र में ही लागू नहीं होता। यदि लोग सरकार के सम्बन्ध में शिकायत करते हैं, तो कहा जाता हैह्वह्व''किसी भी देश और राष्ट्र में लोगों को वही शासन मिलता है जिसके वह योग्य होते हैं, क्योंकि सर्वोच्च पद पर भेजने वाले व्यक्ति को चयनित करने के उत्तरदायी वही हैं।''

अपने जीवन में भी हम यदि कुछ अधिक अच्छे के योग्य होते हैं, तो वह अधिक अच्छा हमें प्राप्त हो जाता है। यदि उससे भी और अधिक श्रेष्ठ की योग्यता हममें होती है, तो स्थिति परिवर्तित हो जाती है तथा हमें और भी श्रेष्ठतर उपलब्ध हो जाता है। हम स्वयं क्या करते हैं, किस ढंग से करते हैं, उसी पर निर्भर करता है कि अन्ततः हमें क्या प्राप्त होना है।

हिन्दू-धर्म में सदा ही यह कहा गया है कि सर्वशक्तिमान् परमात्मा, भगवान् कल्पतरु हैं, कामधेनु हैं, चिन्तामणि हैं, भक्त भाव-विह्वल स्वर में उन्हें सम्बोधित करते हुए कहते हैंह्वह्व''हे प्रभु, आप वांछित फल-प्रदायक हैं।''

किन्तु इस कथन में कुछ विशेष महत्त्वपूर्ण है। वे कहते हैंह्वह्व'वांछित फल-प्रदायक।' फल ऐसी वस्तु है जिसके लिए महीनों

अथवा वर्षों तक परिश्रम किया गया होता है। बीज बोया जाता है, उसे सींचा जाता है, देखभाल की जाती है, पोषित किया जाता है, बाड़ बाँध कर सुरक्षित रखा जाता है। इस प्रकार सब आवश्यक कार्य कर दिये जाने पर यह फल देता है। यह नहीं कहते कि भगवान् से जो वस्तु चाही जाये, वह प्रदान करते हैं; प्रत्युत् वे कहते हैं कि 'वांछित फल' के प्रदाता हैं। जीव जिस किसी भी 'फल' की इच्छा रखता है, वह उसे तत्काल प्राप्त करवाते हैं और 'फल' वही होता है, जिसके लिए कार्य किया गया हो।

इसका अर्थ है कि वह तत्परता से वही प्रदान कर देते हैं, जिसकी इच्छा की जाये और फिर उस इच्छित फल की प्राप्ति हेतु परिश्रम करके उसकी योग्यता अर्जित की जाये। आपकी इच्छाएँ सर्वोत्कृष्ट और उदात्त हो सकती हैं, सर्वोच्च आकांक्षाएँ आप रख सकते हैं, सर्वश्रेष्ठ आध्यात्मिक उद्देश्य हो सकते हैं आपकेह्लह्लयह सब-कुछ बहुत अच्छा है; किन्तु इसके पीछे आपके धैर्य, परिश्रम और अभ्यास का आधार होना नितान्त आवश्यक है। ऐसे गम्भीर प्रयास के द्वारा आप अधिकारी बन जायेंगे। और जब आप इस प्रकार के बन कर इच्छा करेंगे, तो उदात्त आकांक्षा और परिश्रमह्लह्लदोनों होने से भगवान् आपके लिए कामधेनु, कल्पतरु और चिन्तामणि बन जायेंगे।

अतः हमारी आकांक्षाएँ, उदात्त इच्छाएँ धैर्य पर आधारित होनी चाहिए, ऐसी सच्ची और भली जीवन-पद्धति पर आधारित होनी चाहिए जो इन आकांक्षाओं की पूर्ति के लिए प्रेरक और अनुकूल हो। गुरुदेव प्रायः कहा करते थेह्लह्ल''सब-कुछ सम्भव है। कुछ भी असम्भव नहीं, यदि आप इसके योग्य हो और आपने इसके लिए परिश्रम किया है। आकांक्षा करें और उसके योग्य बनें।'' आकांक्षा करें और फिर उसके अधिकारी बनेंह्लह्लइच्छाओं की पूर्ति होगी।

और उस प्रभु ने, उस परमात्मा ने जिनके हृदय में ऐसी उदात्त इच्छा का एक स्फुलिंग, ऐसी आकांक्षा का एक स्फुलिंग भर दिया है, ऐसे कतिपय व्यक्तियों को आप उँगलियों पर गिन सकते हैं, जब कि लाखों की संख्या अन्धकार में ही गोते लगाने वालों की है और संसार के दलदल में लोटते हुए वे सन्तुष्ट हैं। इसी में वे सुख अनुभव करते हैं, प्रसन्न हैं और समझते हैं कि वे सही हैं। असंख्य करोड़ों में से कोई एक ही पूर्णता प्राप्ति की आकांक्षा करने वाले होते हैंह्न ''**मनुष्याणां सहस्रेषु कश्चिद्यतति सिद्धये**'' (हजारों मनुष्यों में कोई एक मेरी प्राप्ति के लिए यत्न करता है)।

अतः निष्कर्षतया हम इस मर्मोक्ति द्वारा समापन करते हैं कि 'जहाँ चाह है वहाँ राह है', उस प्राप्तव्य को प्राप्त करने का मार्ग है। जो परम लक्ष्य हमने अपने लिए निश्चित कर लिया है, वहाँ तक पहुँचने का रास्ता है। उस प्राणी के लिए वह सब-कुछ सुलभ, सब-कुछ अनुकूल हो जाता है, जिसकी उसने इच्छा की होती है। निश्चय किया होता है और दृढ़तापूर्वक उन उच्च आदर्शों के लिए प्रयास किया होता है।

बाधाएँ अनेक हो सकती हैं, कठिनाइयाँ असंख्य आ सकती हैं। ऐसा नहीं है कि धर्मग्रन्थों ने इस संसार से सम्बन्धित सत्यों को हमसे छिपाया है और हमें गुमराह किया है। नहीं, वह तो अत्यन्त स्पष्ट, ईमानदार और सच्चे रहे हैं। जो-कुछ भी नकारात्मक है, जो-कुछ भी हमारे सामने आना है, वह उन्होंने पहले ही हमारे सम्मुख स्पष्ट कर दिया है। उन्होंने हमसे छल नहीं किया। उन्होंने कहाह्न ''नहीं, नहीं, यह इतना आसान नहीं है।'' किन्तु साथ ही यह भी कहा कि 'अत्यधिक कठिन को भी सरल किया जा सकता है, यदि आपमें उसकी इच्छा और निश्चयात्मकता हो।' यही वांछित वस्तु हैह्नह्नकेवल यही अनिवार्य है।

क्योंकि यदि परमात्मा कामधेनु, कल्पतरु, चिन्तामणि, वांछित-फल-प्रदायक है, यदि वह ऐसा है, जो कि निस्सन्देह है प्रत्युत् उससे भी बढ़ कर है; तब फिर हमें नचिकेता जैसा, सावित्री जैसा, प्रह्लाद, मीरा और भागीरथ जैसा होना होगा। क्योंकि जहाँ चाह है, वहाँ निश्चित रूप से राह भी है। अतः यही सत्य है, जिसे हमें अपने जीवन का आधार बनाना चाहिए। अपने जीवन जीने का ढंग और अपने जीवन की गतिविधियों का आधार बनाना चाहिए। ईश्वर के वरदान आप सब पर हों!

३

उत्साह बनाये रखना होगा

आध्यात्मिक जीवन का सर्वाधिक गहन सत्य, जो प्रत्येक व्यक्ति के लिए आवश्यक है, यह है कि उत्साह को बनाये रखना पड़ेगा। केवल तब ही कोई भी उन्नति सम्भव है, केवल तभी किसी लाभ की आशा की जा सकती है। और यह उत्साह स्वयं हमें ही प्रयत्नपूर्वक बना कर रखना होगा, यह अपने-आपसे ही हो जायेगाह्वह्वऐसा नहीं है।

गुरु महाराज श्री स्वामी शिवानन्द जी एक विशेष बात बारम्बार हमें दोहराया करते थे कि 'इच्छा करें और अधिकारी बनें।' वह कहा करते थे कि 'इच्छा करना बहुत अच्छा है। बहुत-कुछ प्राप्त करने की अभिलाषा करना, बहुत-कुछ में उन्नति करना, बहुत-कुछ प्राप्त और उपलब्ध करनाह्वह्वयह सब अच्छा है।' किन्तु इसके साथ-साथ हमें उतनी ही सच्चाई और गम्भीरता से परिश्रमपूर्वकह्वह्वजो इच्छा की है, उसे प्राप्त करने की योग्यता के लिए भीह्वह्वप्रयत्न करना चाहिए। हमें शान्ति और धैर्यपूर्वक स्वयं को उस योग्य बनाने के लिए व्यावहारिक ढंग से लग जाना चाहिए।

किसी उदात्त वस्तु के लिए, उत्कृष्ट के लिए आकांक्षा करना, भले के लिए आकांक्षा करना किसी रूप में भी अनुचित नहीं है। जिज्ञासा होना अच्छा है, शुभेच्छा करना ठीक है। यहाँ तक कि भला करने की

इच्छा होना अच्छा है, दूसरों की सहायता की इच्छा रखना अच्छा है, आध्यात्मिकता अर्जित करने की इच्छा, दिन-प्रति-दिन अधिक अच्छा व्यक्ति बनते जाने की इच्छाह्वह्वइन सबको दिव्य कहा गया है। यह दैवी तत्त्व है। भगवान् कहते हैंह्वह्व''यह शुभेच्छा वास्तव में मेरी ही विद्यमानता है। मैं ही हूँ जो व्यक्ति में शुभाकांक्षा के रूप में प्रकट होता हूँ। एक ऐसे भले व्यक्ति में, ऐसे आकांक्षी व्यक्ति में, जो और भला बनने की अभिलाषा करता है, मैं ही प्रकट होता हूँ।''

शुभेच्छा स्वयं को उन्नत करने की, विकसित करने की कुंजी है। सप्त-ज्ञान-भूमिका में शुभेच्छा की प्रथम भूमिका है। अपरोक्षानुभूति की ओर की यात्रा प्रारम्भ करने से पूर्व जो प्रथम पग है, वह यह है कि अपने हृदय में आप शुभेच्छा उत्पन्न करें। किन्तु यदि इसे वास्तव में परिवर्तनात्मक तत्त्व बनाना है, दिन-प्रति-दिन, प्रत्येक घण्टे और प्रत्येक मिनट उन्नति की ओर अग्रसर होने वाला बनाना है, तब इसका निरन्तर नवीनीकरण करते रहना चाहिए। इसमें सतत पुनर्प्राण संचालित और पुनर्शक्तिवर्धन करते रहना चाहिए।

क्योंकि जहाँ अखण्ड उत्साह है, वहाँ सब-कुछ सम्भव हो जाता है और उपलब्धि तो उसी को होती है जो थोड़ी-बहुत रुकावटों के होते हुए भी, अवश्यम्भावी उतार-चढ़ाव आने पर भी, यदा-कदा आत्म-विश्वास की कमी हो जाने पर भी, कभी-कभार उदासी और विषाद होने पर भी तथा कभी-कभी लड़खड़ा जाने और विचलित हो जाने पर भी, निरन्तर सतत उत्साह को बनाये रखता है। वह कहता हैह्वह्व''न, न, यह मैं नहीं हूँ। यह तो कुछ और है, जो बीच में विघ्न डाल रहा है। मैं तो

तीव्र आकांक्षा हूँ। मैं दृढ़ इच्छा हूँ। मैं उत्साह हूँ। अतः मैं स्वाग्रही रहूँगा।'' हमें कुछ भी ऐसा मूर्खतापूर्वक और अविचारपूर्वक नहीं करना चाहिए जो-कुछ विपरीत लाने वाला हो। स्वयं को सुधारने की तीव्र उत्सुकता अवश्य बनी रहनी चाहिए और यह मनोवृत्ति दिन-प्रति-दिन, नित-नूतन करते रहनी चाहिए।

और इसके लिए भगवान् में विश्वास होना अति आवश्यक है। इसके लिए सद्ग्रन्थों में श्रद्धा होना अति आवश्यक है और आपको यह विश्वास अवश्यमेव होना चाहिए कि 'यदि भगवान् ने मुझे अपना प्रतिबिम्ब बनाया है, यदि उन्होंने अपनी आत्मा का मुझमें संचरण किया है, यदि मैं उनका अंश हूँ और उन्होंने मुझे आत्म-साक्षात्कार की प्राप्ति के लिए यहाँ भेजा है, अपनी दिव्यता को जानने के लिए भेजा है, तब यह अवश्य ही सम्भव होना चाहिए। यदि मेरे लिए भगवान् ने यही निर्धारित किया है, तो मैं इससे भिन्न कुछ भी क्यों सोचूँ? क्यों करूँ? नहीं, मैं ऐसा नहीं करूँगा। मैं अविवेकी नहीं बनूँगा।' ऐसी उत्कण्ठा, ऐसी तीक्ष्ण आकांक्षा, ऐसा उत्साह सच्चे विश्वास का परिणाम है, दृढ़ निष्ठा का परिणाम है। ऐसी निष्ठा होनी चाहिए। ऐसी श्रद्धा और विश्वास होना चाहिए : ''**श्रद्धावान् लभते ज्ञानम्**''ह्नह्नजो व्यक्ति श्रद्धा-विश्वास से पूर्ण है, वही ज्ञान प्राप्त करता है। जैसा व्यक्ति का विश्वास होता है, वैसा ही व्यक्ति वह स्वयं होता है।

अपने निजी जीवन के सम्बन्ध में इस गहन सत्य पर भली-भाँति मनन करें। उत्साह का नवीनीकरण करना होगा। एक सतत, अटूट उत्साह सब ओर बनाये रखना होगा और इसे निरन्तर दृढ़ करते रहना

होगा। यह उपलब्धि का रहस्य है, प्राप्ति का रहस्य है, सफलता का रहस्य है। प्रभु के आशीर्वाद आप सब पर हों कि यदि आप अपने जीवन में उन्नति चाहते हैं, तो इस सत्य के महत्त्व को और अपने जीवन में उसके महत्त्व को भली-भाँति पहचानें! भगवान् आपको इस सत्य के कार्य को कार्यान्वित करने का विवेक दें और आपके प्रयास सफल हों!

४

समस्याओं को देखने का एक दूसरा ढंग

कभी-कभी साधक के मन में एक प्रश्न उठता हैह्लह्लऐसा क्यों है कि साधक को इतनी अधिक समस्याओं, बाधाओं, रुकावटों और कठिन परिस्थितियों का सामना करना पड़ता है, जब कि सामान्य सांसारिक जीवन जी रहे व्यक्तियों के जीवन में ऐसा प्रतीत नहीं होता? उसको कोई आयकर सम्बन्धी या फिर अपने बच्चे को विद्यालय में प्रवेश दिलाने सम्बन्धी समस्या आ सकती है, किन्तु आन्तरिक आयाम की गहराई में उसे इतनी गहन समस्याओं का सामना नहीं करना पड़ता।

इसका उत्तर है कि ऐसा इसलिए है, क्योंकि आध्यात्मिक जीवन जीना सामान्य जीवन के प्रवाह के विपरीत जाने जैसा है। यह उसी प्रकार का अन्तर है जैसे एक व्यक्ति तो नदी की धारा के साथ-साथ तैर रहा हो और दूसरा धारा की विपरीत गति में तैर रहा हो। अतः जो धारा के विपरीत ऊपर की ओर जा रहा है, उसे स्वाभाविक ही धारा के साथ-साथ जाने वाले की अपेक्षा कहीं अधिक शक्ति के साथ प्रयत्न करना पड़ेगा। धारा के प्रवाह के साथ नीचे की ओर जाने वाले बिना बाधा नीचे बहते जाते हैं। यही उत्तर है कि आपको क्यों इतनी समस्याएँ आती हैं।

आपने अपने लिए महान् लक्ष्य निर्धारित किया है और इसकी ओर कम-से-कम कठिनाई का सामना करते हुए बढ़ते जाने का एक ढंग तो

यह है कि आपसे पहले जो महापुरुष इन रास्तों पर चल कर गये हैं, उन्हीं के पदचिह्नों का अनुसरण करना। वे इसी मार्ग से गये, ऐसा जीवन जिया, बहुत-सी कठिनाइयों का सामना किया और अन्ततः लक्ष्य को प्राप्त कर लिया। जब तक वे अपने लक्ष्य तक पहुँच नहीं गये, तब तक मार्ग में आने वाली कठिनाइयों से जूझने के लिए उन्होंने जो-जो कदम उठाये, उनका अनुसरण करें। अतः सन्तों के जीवन पर मनन करें। उनको अपना आदर्श बनायें, उनके जीवन को निहारें और उनसे प्रेरणा प्राप्त करें। उनके ज्ञानोपदेशों से भी निर्देशन प्राप्त करें। उन्होंने अपना जीवन ही एक आदर्श के रूप में दे दिया है और उन्होंने अपनी निजी शिक्षाओं और उपदेशों के रूप में बहुमूल्य संकेत-सूचक दिये हैं। सन्तों के जीवन से हमें यह सब-कुछ मिलता है! अतः किसी सन्त को अपना आदर्श मान कर उनसे प्रेरणा और मार्ग-दर्शन प्राप्त करते रहना, इस पथ पर चलने का एक बुद्धिमत्तापूर्ण ढंग है।

रास्ते में बड़ी बाधा प्रतीत होने वाली परिस्थिति से छुटकारा पाने का दूसरा मार्ग है, उस समस्या को एक अन्य परिवर्तित दृष्टिकोण से देखना है। इस प्रकार कहेंह्न ''नहीं, नहीं, यह कोई समस्या नहीं है। यह परिस्थिति मेरे लिए आवश्यक है। भगवान् जानते हैं कि मेरी क्या अवस्था है, मैं कहाँ खड़ा हूँ। इस समय मेरी आध्यात्मिक उन्नति के इस बिन्दु पर मेरे लिए यही आवश्यक होगा, जिससे कि मैं अन्य आन्तरिक ज्ञान प्राप्त कर सकूँ तथा आगे और प्रगति करने के लिए अधिक परिश्रम कर सकूँ।''

अतः समस्याओं को देखने का यह एक अन्य दृष्टिकोण है कि इनका स्वागत करेंह्न ''ये मेरे लिए आवश्यक हैं, इसीलिए ये आ रही हैं। नहीं, तो इन्होंने नहीं आना था। यदि मैं प्रगति के और ऊँचे स्तर पर पहुँच

जाऊँगा, तो ऐसी परिस्थितियाँ नहीं आयेंगी, क्योंकि तब मैं पहले ही इनसे अतीत जा चुका होऊँगा। तब मुझे इनकी आवश्यकता नहीं होगी।''

अतः इस प्रकार हम समस्याओं को समस्या के रूप में नहीं लेते; बल्कि एक सुअवसर, एक उचित परिस्थिति के रूप में लेते हैं, जिसके द्वारा हम अपने आन्तरिक साधनों (जो भी हमने अपने आध्यात्मिक जीवन में साधना द्वारा विकसित किये हैं) को अभिव्यक्त कर सकते हैं। अब तक जो भी वैराग्य हमने सीखा है, उसे अभिव्यक्त कर सकते हैं, अब हमें अपनी परीक्षा देने का क्षेत्र मिला है। अतः जो परिस्थिति हमें समस्या प्रतीत हो रही है, वह वास्तव में हमें अपनी परीक्षा देने का एक सुअवसर है कि हम अपनी प्रगति के नाम पर कहाँ खड़े हैं। हम इसे एक चुनौती के रूप में लेते हैं, ताकि हम स्वयं सिद्ध कर सकें कि हमने जितनी प्रगति की है, उसमें हम दृढ़तापूर्वक स्थित हैं; हम रेत के ढेर पर नहीं, पत्थर की चट्टान पर खड़े हैं।

अत: प्रत्येक वस्तु-स्थिति को रचनात्मक दृष्टि से, सकारात्मक दृष्टिकोण से ग्रहण करें। उत्साह को बनाये रखने का यही मार्ग है, आध्यात्मिक जीवन में प्रगति करने का यही ढंग है। इन परिस्थितियों का आन्तरिक मूल्य देखें; यह जान लें कि ये महत्त्वपूर्ण और आवश्यक हैं और हम इनसे लाभान्वित हो सकते हैं! भगवान् हम सब पर कृपा करें!

५

केवल भगवान् का ही चिन्तन

आप सबके लिए मनन करने का आवश्यक तत्त्व यह है कि समय उड़ता जा रहा है। दिवस सप्ताह में बदल रहे हैं, सप्ताह महीनों में, महीने वर्षों में। एक-एक दिन करके हमारी जीवन-अवधि घटती जा रही है; विभिन्न विकर्षण हमारे मन को लक्ष्य से दूर ले जाते हैं। आप कैसे यह अपेक्षा रखते हैं कि आपका जीवन ईश्वर-साक्षात्कार से अभिषिक्त होगा? प्रबोधन से, मोक्ष से, आनन्द से, शान्ति से और परिपूर्णता से अलंकृत होगा? कैसे यह आशा रखते हैं?

यह केवल तभी सम्भव है जब व्यक्ति निरन्तर भगवान् का, केवल भगवान् का ही चिन्तन करता है, जब व्यक्ति भगवान् के अतिरिक्त अन्य सब विचारों को छोड़ कर केवल मात्र भगवान् का ही चिन्तन करता है। ऐसे व्यक्ति के लिए हम लगभग कह सकते हैं कि यदि भगवान् का अनुग्रह भी है तो, ईश्वरानुभति की प्राप्ति इसी जन्म में, बल्कि अभी और यहीं निश्चित है।

क्योंकि, जो व्यक्ति अपना मन, अपनी अन्तर्दृष्टि निरन्तर अबाध रूप से भगवान् और केवल भगवान् पर दृढ़तापूर्वक स्थिर रखता है, जो अन्य किसी भी विचार को प्रवेश नहीं होने देता, जो पूर्णतया ईश्वर में स्थित है, शत-प्रति-शत, किसी भी अन्य विचार को हस्तक्षेप नहीं करने देताह्वह्वतब ऐसे व्यक्ति का अन्तःकरण मानवीय नहीं रहता, यह तब

मानसिक भी नहीं रहता, तब उसका अन्तःकरण स्वयं भगवान् ही हो जाता है। क्योंकि ऐसे व्यक्ति में भगवान् निवास करते हैं, वे उसके अन्तर्मन को, उसकी चेतना को पूर्णतया भर देते हैं। तब वह व्यक्ति ईश्वरीय चेतना की स्थिति में पहुँच जाता हैह्वह्वह तब मानवीय चेतना में नहीं रहता।

ऐसी स्थिति के लिए हमें प्रार्थना करनी चाहिए। इसके लिए हमें अथक प्रयत्न करना चाहिए। विनम्रता सहित, बिना अहंकार केह्वह्वयह जानते हुए कि यह प्रयत्न भी उन्हीं के द्वारा प्रेरित है, उन्हीं की कृपा की शक्ति से हो रहा हैह्वह्वयहाँ मैं कुछ भी नहीं हूँ, केवल एक वही सब-कुछ हैं। और हम उस सर्वशक्तिमान् से, उस सर्वातीत सत्ता से प्रार्थना करते हैं, हम परम पावन गुरुदेव से प्रार्थना करते हैं कि वे यह आशीर्वाद और वरदान कृपापूर्वक आपमें से प्रत्येक को प्रदान करें! ऐसा ही हो!

६

सदा आशावादी रहें!

गुरुदेव के प्रिय वचनों, जिन्हें वे प्रायः अपने लेखों में लिखा करते थे और कहा भी करते थे, में से एक उक्ति थीह्लह्व''कभी निराश न हों, कभी भी निराश न हों।'' आप यहाँ प्रयास करने के लिए आये हैं, अतः प्रयास करते रहें, पुरुषार्थ करें। ''हृदय में उत्साह हो, तो शिर पर प्रभु का हाथ है''ह्लह्वअतः दृढ़ता रखें, निश्चय को बनाये रखें और लगे रहें। अपने हृदय में सही भाव रखें और लगे रहें। परिश्रम करेंगे, तो भगवान् की ओर से भी सहायता आयेगी।

जीवन को देखने के दो ढंग हैं। एक हीन भावना का, आत्म-विश्वास हीनता का और नकारात्मकता का हैह्लह्व''मुझे नहीं लगता कि मैं यह कर सकता हूँ। यह बहुत कठिन है, मैं नहीं कर सकूँगा।'' दूसरा तरीका हैह्लह्व''मैं कर सकता हूँ। 'मैं कर सकता हूँ या नहीं', यह मैं पहले से ही कैसे कह सकता हूँ, जब तक कि मैं प्रयास करके देख न लूँ? प्रयत्न करने से ही मालूम होगा कि मैं कर सकता हूँ या नहीं। मुझे पहले प्रयास करना चाहिए, मैं पूर्णतया प्रयत्न करूँगा।'' और इस प्रकार यदि आप पूरा प्रयत्न करने पर भी सफल नहीं होते, तो मैं निश्चित रूप से कह सकता हूँ कि आप असफल नहीं हुए हो। सफलता भले ही आपको प्राप्त न हुई हो, पर आप असफल नहीं हुए। आपने मानव होने का कर्तव्य निभा दिया। क्योंकि आप परमात्मा के प्रतिबिम्ब में बने हैं, आप नकारात्मकता का गट्ठर नहीं हैं। भगवान् पूर्ण सकारात्मकता हैं, भगवान्

में किंचित् भी नकारात्मकता नहीं है और आप उन्हीं का प्रतिबिम्ब हैं। आप अपने दिव्य स्वभाव को झूठा सिद्ध न करें। हर पग पर, हर वस्तु-परिस्थिति में आपको अपने दिव्य स्वभाव को सिद्ध करना चाहिए।

अतः आपके लिए यह आवश्यक है कि जीवन के प्रति सदैव आशावादी दृष्टिकोण रखें। प्रत्येक वस्तु के प्रति सदैव सकारात्मक दृष्टिकोण अपनायें, नकारात्मक नहीं। अपने नित्य-प्रति के जीवन में, जीवन के प्रति नकारात्मक नहीं, सकारात्मक दृष्टि से आगे बढ़ें। तब आपके हृदय की अवस्था उस कवि के कथन के अनुसार होगी, ''भीतर हृदय, ऊपर भगवान्।''

और ऐसे ही हृदय के लिए हमें भगवान् से प्रार्थना करनी चाहिएह्लह्ल''मुझे पूर्ण विश्वास है कि आपकी कृपा मेरा पथ-निर्देशन करने वाली शक्ति होगी और वह सदा मेरे जीवन-मार्ग को पग-पग पर प्रकाशित करती रहेगी। इस प्रकार आपकी सहायता से, ऐसा कुछ नहीं है जो मैं न कर सकूँ। समस्त सच्चे साधकों पर कृपा-वृष्टि करने को आप सदैव तत्पर हैं। इसी विश्वास के साथ मैं अपने कार्य में प्रयत्नशील रहूँगा कि जब जहाँ आवश्यकता होगी, आप सहायता करेंगे ही।''

जीवन के प्रति इस प्रकार नकारात्मक और सकारात्मक इन दो दृष्टिकोणों में से, इन दो प्रवेश-मार्गों में से और वस्तु-परिस्थितियों को देखने की इन दो सकारात्मक और नकारात्मक दृष्टियों में से विवेकी साधक सदैव सकारात्मक दृष्टिह्लह्लजो कि सही दृष्टि हैह्लह्लरखता है, कभी भी गलत दृष्टिह्लह्लनकारात्मक दृष्टि नहीं अपनाता।

आशा दैवी गुण है। दृढ़ निश्चय एक दिव्य गुण है। यह शक्ति का प्रकटीकरण है। अतः यह हमारा अपने प्रति और भगवान् के प्रति कर्तव्य है कि सदैव अपने अन्तर्मन को आशापूर्ण अवस्था में बनाये रखें। यह हमारा कर्तव्य है कि वस्तु-स्थितियों के प्रति सदा आशावादी दृष्टिकोण रखें। जीवन के प्रति आशापूर्ण दृष्टि रखें तथा जीवन और कार्यों के प्रति आशावादी विचार रखते हुए आगे बढ़ें। यही सही है, इसे अपनायें और यह आपको जीवन में सफलता प्रदान करने में सहायक होगा।

७

आध्यात्मिक उन्नति

सर्वोच्च लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए हमें प्रतिदिन इसकी ओर बढ़ते जाना पड़ेगा, और इसके लिए आज का यह दिन अति उत्तम और सौभाग्यशाली है कि हम ध्यान के सिद्धान्तों एवं व्यावहारिक पक्ष के सभी पहलुओं को देखते हुए नियमित रूप से अपनी साधना को आरम्भ कर दें। हम प्रात: और सायंकाल के समय ध्यान तो करते हैं; किन्तु दिन के शेष समय दूसरों के साथ व्यवहार करते समय मन की संकीर्णता और स्वार्थपरता दिखाने लगते हैं। यही हमारी साधना में बाधक बन जाता है और हमारे ध्यान के प्रभाव को समाप्त कर देता है। युलेसिज की अनुपस्थिति की अवधि में उसकी पत्नी पेनीलोप के बहुत से विवाहार्थी हो गये; किन्तु वह उनमें से किसी से भी विवाह नहीं करना चाहती थी, क्योंकि वह पतिव्रता एवं निष्ठावान् महिला थी। अत: उसने अपने विवाहार्थियों से कहा कि वह एक पोशाक बुन रही है, जब तक वह पूरी नहीं हो जाती, तब तक वह विवाह के लिए 'हाँ' नहीं कहेगी। वे मान गये। प्रतिदिन वह बुनाई करती रहती; किन्तु जैसे ही रात होती, वह दिन का बनाया हुआ उधेड़ देती। ऐसा तब तक चलता रहा, जब तक कि युलेसिज न आ गया।

किन्तु हमारे जीवन में ऐसा नहीं होना चाहिए। प्रात:-सायं हमने जो साधन-भजन किया है, उसमें हमें अदिव्य तत्त्व नहीं जोड़ देने चाहिए। यदि व्यवहार के समय हम अपना सारतत्त्व भूल जाते हैं, यदि हम कठोर

बन जाते हैं, यदि हम आलोचना करने लगते हैं, यदि हम छल-कपट करते हैंह्नह्नतो यह सब-कुछ हमारे ध्यान-काल में की गयी साधना को नष्ट कर देगा। इसलिए हमारे बाह्य लौकिक जीवन और गतिविधियों को, हमारी वाणी और व्यवहार को, हमारे ध्यान, पूजा एवं साधना के भाव को विकसित करने वाला होना चाहिए। और ऐसा करने के लिए, यह अत्यन्त आवश्यक है कि हम अपनी साधना को केवल कुछ एक घण्टे तक की सीमित न रखें, प्रत्युत् दिन-भर में किये जाने वाले अपने कार्यों का भी दिव्यीकरण कर लें। हमारे सभी कार्यों से हमारा वास्तविक आन्तरिक स्वभाव अभिव्यक्त होना चाहिए। वे सब आध्यात्मिक हो जाने चाहिए। कर्मयोग में सभी गतिविधियों का इसी प्रकार आध्यात्मीकरण करना सिखाया गया है। प्रत्येक व्यक्ति भले ही वह ध्यानयोगी हो, भक्तियोगी हो अथवा वेदान्ती हो, को निश्चित रूप से यह बात जान लेनी चाहिए। कर्मयोग अत्यन्त कठिन है। जब आप अकेले होते हैं, उस समय आप बहुत आदर्शपूर्ण भाव में रहते हैं; किन्तु जब संसार की कठोर विफलताओं और विरोधों से टकराना पड़ता है, तब सामंजस्य बनाये रखना, केवल दिव्यता एवं नि:स्वार्थता ही अभिव्यक्ति करना अत्यन्त कठिन कार्य है। किन्तु ऐसा करना सार्थक है, क्योंकि ऐसा करने से अन्य योग सफल हो जाते हैं। जो व्यक्ति आदर्श जीवन जीता है, आत्म-बलिदान से पूर्ण जीवन जीता है, मधुरता से पूर्ण जीवन जीता है, उसके द्वारा किया गया एक माला जप, अन्य लोगों द्वारा किये गये सहस्र माला जप के बराबर है, क्योंकि उसका स्वभाव दिव्य कार्य-कलापों के द्वारा शुद्ध हो गया होता है। किन्तु यदि आपका स्वभाव काम और क्रोध से भरपूर है, तो क्योंकि आपकी तैयारी पूर्ण नहीं है, इसलिए यदि आप ध्यान भी करेंगे तो उसमें सफलता नहीं मिलेगी। आप आश्चर्यचकित हो

कर सोचेंगे, मैं उन्नति क्यों नहीं कर पा रहा था? क्योंकि आप अपने दैनिक जीवन में अपनी साधना के प्रतिकूल काम करते जा रहे हैं। साधक को निश्चित रूप से जागरूक रहना होगा। उसे ज्ञात होना चाहिए कि बर्तन कहाँ से टपक रहा है। अन्यथा यदि बर्तन रिस रहा हो तो आप कितना ही उसे भरने का प्रयत्न करते रहें, सब व्यर्थ ही होगा। आपको पहले जान लेना आवश्यक है कि छिद्र कहाँ है। इसके लिए आपको कर्मयोग की कला को जानना आवश्यक है।

८

दिव्य जीवन यापन

आप इस देह और मन से परे, अमर अविनाशी आत्मा हैं। भगवान् आपके अस्तित्व का मूल स्रोत हैं तथा अपने अन्तरतम से आप उनसे अविच्छेद्य हैं। धन-सम्पत्ति एवं प्रचुर ऐश्वर्य प्राप्त करके भी आज बीसवीं सदी की मानव-जाति में शान्ति नहीं है। मनुष्य असन्तोष एवं असुरक्षा की स्थिति में है तथा संसार में सर्वत्र कलह एवं विषमता का साम्राज्य है।

परम पावन सद्गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज ने अपार करुणा एवं प्रेमवश आधुनिक मनुष्य को इस संसार में रहते हुए ही दिव्य जीवन जीने तथा उसके द्वारा आनन्द प्राप्त करने का मार्ग दिखाया है। यहाँ पर हम केवल आ कर, जाने वाले यात्री हैं। प्रारब्धवश हम थोड़े समय के लिए एक बार पुन: अपने मूल स्रोतह्वभगवान् के साथ अपना खोया हुआ सम्बन्ध जोड़ने के लिए, यह सुनहरा अवसर प्राप्त करके आये हैं।

अत: निश्चित रूप से हमें मोक्ष का, दु:ख-दर्द एवं कष्टों से मुक्ति प्राप्त करने का प्रयत्न करना चाहिए। गुरुदेव ने मानव को संसार में रहते हुए, समस्त सांसारिक कर्तव्य निभाते हुए, इसी के द्वारा मोक्ष-प्राप्ति का सरल मार्ग दिखाया।

दिव्य जीवन का अर्थ है, इस जागरूकता में जीना कि आप वास्तव में दिव्य हैं, कि आपका वास्तविक स्वरूप काल से अतीत, शाश्वत अमर आत्मा है। अलग-अलग नाम होने पर भी सब धर्मों का आधार

एवं लक्ष्य भगवान् हैं। वह एकमेव अद्वितीय ही सर्वत्र विद्यमान हैं, भले ही पूजा का स्थान किसी भी नाम से हो, साथ ही विश्व के समस्त धर्मग्रन्थों में एकमात्र उसी परम तत्त्व की महिमा का वर्णन है। दिव्य जीवन उद्घोषित करता है कि जीवन का लक्ष्य परमात्मा का साक्षात्कार करना है।

दिव्य जीवन यापन करने के लिए आपको संसार छोड़ कर कहीं जाने की आवश्यकता नहीं है; क्योंकि आप अपना सामान्य जीवन जीते हुए, घर के और जीविकोपार्जन के काम-काज करते हुए तथा सामाजिक जीवन जीते हुए भी अपने इस लक्ष्य की प्राप्ति कर सकते हैं। सबसे पहले आपको अपना चित्त शुद्ध करना होगा तथा दूसरों की समर्पित भाव से सेवा करके व्यक्तिगत स्वार्थपरता को छोड़ना होगा। सभी कीह्वह्वरोगियों की, निर्धनों की, दु:खियों और पीड़ितों कीह्वह्वसेवा करने के लिए सदा तत्पर रहें। अपने साथी लोगों की तथा भगवान् द्वारा रची गयी इस सृष्टि के प्रत्येक प्राणी की सेवा को मिलने वाले सुअवसर को पाने से स्वयं को सौभाग्यशाली समझें। इस निष्काम भाव से की जाने वाली नि:स्वार्थ सेवा से चित्त शुद्ध होता है जिससे फिर भगवान् की भक्ति उदित होती है।

दूसरे, नित्य भगवान् की पूजा करें; क्योंकि आपके अस्तित्व का मुख्य केन्द्र भगवान् ही हैं। वह आपसे कहीं दूर नहीं रहते हैं, बल्कि वह तो इस सम्पूर्ण विश्व के कण-कण में सदा विद्यमान दिव्य सत्ता हैं। आपके अपने श्वास से भी अधिक निकट वह आपके पास हैं। इस तथ्य को कभी न भूलें। उनके प्रति प्रेमपूरित हृदय से साथ दिव्य प्रेम के सम्बन्ध की पुन: स्थापना करें। दैनिक पूजा एवं प्रार्थना की इस प्रक्रिया में चंचल मन को धीरे-धीरे सुस्थिर करने की, इसके इधर-उधर भागने को नियन्त्रित करके एकाग्रता लाने की शक्ति निहित है।

तीसरा है, मन का प्रत्याहार, इन्द्रियों और विचारों का नियन्त्रण तथा परम दिव्य सत्ता पर ध्यान करना। श्रद्धा, भक्ति और प्रार्थना से आपके जीवन में ऊर्ध्वगमन आरम्भ हो जाता है और आप दैनिक ध्यान में प्रवेश पा लेते हैं, जिससे आपमें स्थिरता आ जाती है। आप अपने हृदय में भगवान् की उपस्थिति 'अनुभव' करने लगते हैं जिससे कि जब आप अपनी दैनिक गतिविधियों में लगे होते हैं, उस समय भी ईश्वरीय जागरूकता की अबाधित लहर चलती रहती है। आप भगवान् में जीना, उनमें चलना-फिरना और उन्हीं में अस्तित्व का होना 'जानना' शुरू कर देते हैं। ध्यान आपके जीवन में आध्यात्मिक गुणवत्ता लाता है, जो आपको शुद्धता, अनुकम्पा और पूर्णता के नूतन स्तर तक उन्नत करके ले जाता है। आप उदात्त विचारों तथा उत्कृष्ट भावनाओं से सम्पन्न व्यक्ति के रूप में परिणित हो जाते हैं।

चौथा है कि ईश्वरीय-जागरूकता की इस स्थिति में प्रवेश पा लेने पर आपकी बुद्धि शुद्ध हो जाती है। तब फिर शाश्वत और परिवर्तनशील में, स्थाई और अस्थाई के बीच दार्शनिक खोज और विवेक आरम्भ होता है। अपनी जाग्रत अवस्था की प्रत्येक घड़ी यह विवेक चलता रहना चाहिए। तब आप अनाध्यात्मिक को नकारना तथा जगत्-प्रपंच के पीछे निहित सत्ता की ओर अपने मन को लगाना आरम्भ कर देते हैं। आपका मन उस शाश्वत सत्य की ओरह्लइस जगत्-प्रपंच के कार्यों को करते हुए भीह्लबढ़ने लग जाता है। आप तब उस परम दिव्य सत्य में स्थिर हो जाते हैं।

स्वयं से निरन्तर प्रश्न करते रहें, ''मैं कौन हूँ? मैं इस जगत् में कहाँ से आया हूँ? मेरा लक्ष्य क्या है? यह सब विषय-पदार्थ कैसे हैं?''

इस भाव को सुदृढ़ करें, ''मैं यह शरीर, मन तथा सीमित एवं सान्त बुद्धि नहीं हूँ। मैं जन्म-मृत्यु से परे अमर आत्माह्नह्नसत्-चित्-आनन्द स्वरूप हूँ।''

यदि आप दिव्य जीवन में प्रवेश करना चाहते हैं तो आपको इस संसार में रहते हुए अपने दैनिक जीवन में चरित्र एवं आचरण सम्बन्धी नियमों का पालन करना होगा। सेवा, भक्ति, ध्यान और साक्षात्कार के दिव्य जीवन की नींव और आधार को बनाने वाली ये अपरिहार्य आवश्यकताएँ हैं। वह हैं :

१. सबके प्रति काया, वाचा, मनसा दया एवं सहानुभूति। यही अहिंसा है। सबके प्रति, परमात्मा द्वारा रचित इस जगत् के छोटे-से-छोटे प्राणी के प्रति भी अपने हृदय में असीम प्रेम लिये हुए विश्व-हितैषी बन जायें। सबके लिए शान्ति और प्रसन्नता देने वाले केन्द्र बन जायें।

२. पूरी तरह से सत्यनिष्ठ रहें, सत्य-पालन में भले ही प्राणों का मूल्य चुकाना पड़े, किन्तु सत्य-पथ पर अडिग रहें। पूर्णरूपेण ईमानदारी एवं सत्यनिष्ठा, क्योंकि सत्य ही भगवान् है। एक सत्यनिष्ठ व्यक्ति भगवान् को प्राप्त कर सकता है।

३. आचरण और चरित्र की पवित्रता आत्म-संयम, सबके प्रति पवित्रता और शुद्धतापूर्ण भाव रखना तथा अपने व्यक्तित्व की सभी निम्न प्रवृत्तियों पर नियन्त्रण।

अपना मन सदैव परम लक्ष्य पर स्थिर रखें। भगवान् के साथ अपने सम्बन्ध के प्रति पूर्ण विश्वास एवं श्रद्धा रखें। अपने में तथा अपने चतुर्दिक् के समस्त वस्तु-पदार्थों में उनकी अदृश्य उपस्थिति को देखें एवं अनुभव करें, क्योंकि अपनी सम्पूर्ण सृष्टि में वह स्वयं ही विद्यमान हैं।

आइए! दिव्य अनुभूति प्राप्त करने के लिए लग जायें। अभी इस समय भी आप सच्चिदानन्दब्रह्मसत्-चित्-आनन्द स्वरूप ही हैं! यही आपका वास्तविक निज स्वरूप है। इसी जागरूकता में जीना ही दिव्य जीवन यापन करना है।

भगवान् की कृपा आप सब पर हो!

९

मानव-जीवन का उद्देश्य

इस नश्वर जगत् में ये तीन वस्तुएँ अत्यन्त दुर्लभ हैंह्लह्लमनुष्यत्व, मुमुक्षुत्व तथा सन्तों का संग। ये केवल भगवद्-कृपा से ही प्राप्त हैं। इन तीनों में से मनुष्य-जन्म की प्राप्ति होना एक अनमोल वरदान है, इसीलिए इसे सर्वप्रथम स्थान दिया गया है। केवल यही एक योनि है जिसमें आने पर जीवात्मा को बुद्धि तथा नित्य-अनित्य-वस्तु-विवेक की अत्यन्त विलक्षण क्षमता प्राप्त होती है।

इसलिए मनुष्य-जन्म को भगवान् का अति विलक्षण वरदान माना गया है। इस मनुष्य-जन्म को प्राप्त करके यदि आपमें उस अवस्था को प्राप्त करने की तीव्र आकांक्षा नहीं है, जिसे प्राप्त करने पर आपको परमानन्द एवं मोक्ष प्राप्त हो सकता है, तो इसका अर्थ यह है कि आपने इस मनुष्य-जन्म को प्राप्त करके भी इसका सदुपयोग नहीं किया। तब आपका अस्तित्व पशु-तुल्य ही हो जाता है। खाना, पीना, सोना और इन्द्रिय-सुख भोगनाह्लह्लये सब तो मनुष्य और पशुओं में समान हैं; किन्तु मानव को जो इनसे पृथक् करने वाला है, वह है उसका आदर्शवाद और उसकी मात्र भौतिक सत्ता से उच्चतर 'कुछ और' प्राप्त करने की गहन आकांक्षा! हमें यह ज्ञात है कि ऐसी कोई अन्य श्रेष्ठतर वस्तु है, जिसे प्राप्त करना चाहिए और हममें यह गहन आकांक्षा भी है कि हम इन सांसारिक अपूर्णताओं से मुक्त हो जायें। तब आता है कि विवेकी सत्पुरुषों का संग।

ये प्रथम दोनोंह्लह्लमनुष्यत्व और मुमुक्षुत्वह्लह्लप्राप्त होने पर भी, हमारा जीवन भ्रान्ति के बादलों से ढका ही रहता है और हम निष्फल प्रयासों में ही लगे रहते हैं; क्योंकि सही प्रयत्न क्या है, यह हम नहीं जानते। यह तो उसी सौभाग्यशाली व्यक्ति को ज्ञात होता है जिसे तीसरा वरदान (सन्तों का संग, जो कि पथ की बाधाओं को दूर करने वाला है) प्राप्त हो जाता है। यदि हम ज्ञान-सम्पन्न गुरु के चरणों में समर्पित हो जायें तो वह हमें मार्ग दर्शा देते हैं। जब भी हमारे मार्ग में, प्रलोभन आ कर बाधा डालते हैं, वह हमें प्रेरणा, उत्साह और साहस प्रदान कर देते हैं।

जिनको ये तीनों ही वरदान प्राप्त हैं, उन्हें एक चौथे वरदान की भी आवश्यकता होती है, वह है एक ऐसा मन जो कहता हो, ''ठीक है।'' मनुष्य के अनियन्त्रित मन से बढ़ कर 'शैतान' और कोई नहीं है। यह माया का, माया अथवा अभिमानह्लह्लजो कि ईश्वर-साक्षात्कार के पथ की बाधा है, का प्रतिनिधि है। अत: मन को अनुकूल होना चाहिए। आप पर भले ही देव-कृपा हो, गुरु-कृपा हो और शास्त्र-कृपा भी हो; किन्तु मन के सहयोग के बिना सफलता प्राप्त होना सन्देहपूर्ण ही है।